सामाजिक एवं राजनीतिक सत्ता

मेहमूद खान

आम तौर पर जब हम सत्ता की बात करते हैं तो सामान्य रुप से उसे किसी दूसरे पर नियंत्रण, दबाव अथवा प्रभावित करने के माध्यम के अर्थ में लेते हैं। लेकिन इस अर्थ के साथ यह सवाल उठता है कि क्या सत्ता हमेशा दूसरे को ही प्रभावित करती है या सत्ता स्वयं को भी प्रभावित करती है। यदि स्वयं की सत्ता स्वयं को भी प्रभावित करती है तो उसे किस रूप में देखना या समझना चाहिए? एक दूसरा विचार जो बार-बार मन में आता है कि सत्ता समाज/समुदाय/वर्ग विशेष के लोगों के पास ही होती है या फिर किन्हीं खास मौकों पर हर व्यक्ति के पास होती है? हाँ, व्यापक रूप से देखा जाए तो ऐसा लगता है कि सत्ता कुछ ही समाज/समुदाय/वर्ग के विशेष लोगों के पास ही स्थाई रूप से दिखाई देती है। लेकिन इन सब सवालों से पहले यह सोचना ज़रूरी है कि सत्ता आखिर है क्या। सत्ता आखिर आती कहाँ से है? सत्ता कितने प्रकार की होती है? सत्ता की क्या विशेषताएँ हैं? हमारे सन्दर्भ में सत्ता के क्या सूचक हैं? यह कैसे काम करती है?

सत्ता का अर्थ व अवधारणा

साधारण शब्दों में सत्ता का अर्थ किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा दूसरे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के समूह के व्यवहार को अपनी इच्छानुसार प्रभावित या नियंत्रित करने की योग्यता है। यहाँ अपनी इच्छानुसार प्रभावित करने की योग्यता से आशय समाज के अन्य सदस्यों का सत्ता द्वारा निर्धारित नियमों व नियमावली को मानने और उसके

अधिकार क्षेत्र के बाध्य होने से है, जैसे एक पितृसत्तात्मक परिवार में परिवार के पुरुष मुखिया की सत्ता होती है जहाँ परिवार के सदस्य उसकी आज्ञा का पालन करते हैं और उसके निर्णयों को मानते हैं।

सत्ता सदैव दो या उससे अधिक व्यक्तियों/समूहों/वर्गों/संस्थाओं के बीच सामाजिक एवं राजनीतिक सम्बन्धों को अनिवार्य बना देती है। किसी व्यक्ति के पास सत्ता तब तक निरर्थक है जब तक यह स्पष्ट न हो जाए कि वह सत्ता किस पर प्रयोग की जाती है। सत्ता रखने वाला व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह दूसरों से वह करवा सकता है, जो वह करवाना चाहता है। यदि वे, जिन पर सत्ता का प्रयोग किया जा रहा है, आज्ञा पालन से इन्कार या विरोध करते हैं तो उन्हें किसी-न-किसी प्रकार से दण्डित किया जाता है। कई बार दण्ड का स्वरूप प्रत्यक्ष न होकर कुछ अवसरों से वंचित करने के रूप में भी दिखाई देता है जैसे कई तबकों को उनके सामाजिक व राजनीतिक अवसरों से सत्ता के प्रयोग द्वारा ही वंचित किया जाता है।

दैनिक बोलचाल की भाषा में सत्ता व शक्ति, दोनों अवधारणाओं का अर्थ मिलता-जुलता माना जाता है, जिसे कई बार पर्यायवाची शब्दों की तरह भी उपयोग में लाया जाता है। शक्ति, सत्ता का एक विशिष्ट तत्व है जो व्यक्तियों के बीच अधीनता व अधिकार का सम्बन्ध बनाती है। शक्ति को दो श्रेणियों में बाँटा जाता है – वैध शक्ति और अवैध शक्ति। जब शक्ति का प्रयोग इस प्रकार किया जाता है कि वह सामान्य रूप से उचित व अनिवार्य मानी जाए, तो उसे वैध शक्ति कहा जाता है। इसके विपरीत, जब शक्ति का प्रयोग सामाजिक मान्यता के बिना ही अन्य लोगों को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है तो उसे अवैध शक्ति कहते हैं। सत्ता में वैध शक्ति शामिल होती है। वैधता का अर्थ है कानूनी व नियमित गतिविधियाँ जिन्हें किसी उचित आधार पर न्यायोचित ठहराया जा सके। उदाहरण स्वरूप अगर एक चोर बन्दूक की नोक पर लूटपाट करता है तो यह अवैध शक्ति है न कि सत्ता, लेकिन जब एक कर वसूलने वाला अधिकारी लोगों से कर अदायगी के लिए जेल या जुर्माना लगाने का डर दिखाकर कर वसूलता है तो वह अपनी वैध शक्ति का प्रयोग करता है और यह उसकी सत्ता होती है।

सत्ता की वैधता के स्त्रोत

समाजशास्त्री मैक्स वेबर ने सत्ता की व्यापक विवेचना की है। उन्होंने सत्ता के स्त्रोतों (यथा बुद्धि या विधान, परम्परा तथा चमत्कार) के आधार पर इसे तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया है। ये स्त्रोत, वास्तव में शक्ति को वैधता प्रदान करके इसे सत्ता में परिवर्तित करने के स्त्रोत हैं। जहाँ पारम्परिक सत्ता का उद्भव 'प्रथा तथा प्रचलन' से हुआ था, वहीं करिश्माई

को सत्ता प्राप्त होती है वह सत्ता तब तक स्थाई रहती है जब तक वह प्रधानाचार्य के पद पर बना रहता है। जिस क्षण व्यक्ति प्रधानाचार्य के पद से अलग होता है, उसी क्षण सत्ता उससे अलग हो जाती है।

इस सत्ता में पद सोपान की परम्परा देखने को मिलती है। विशिष्ट पदों पर आसीन व्यक्ति को विशिष्ट सत्ता प्राप्त होती है। कुछ व्यक्तियों का पद ऊँचा होता है और कुछ का निम्न तथा कुछ अन्य का निम्नतर। इस प्रकार समाज में पाई जाने वाली सम्पूर्ण वैधानिक व बौद्धिक सत्ता एक विशिष्ट सोपान परम्परा में विभाजित हो जाती है। इससे व्यक्तियों के पद व क्षेत्र निश्चित और सीमित हो जाते हैं। निश्चित क्षेत्र के बाहर उनकी प्रभावकारिता बिलकुल नहीं होती और वे किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकते। आधुनिक समाज या प्रशासन में सत्ता का यही स्वरूप अधिक महत्वपूर्ण है।

सत्ता का उद्भव 'दैविक स्रोतों' अथवा ईश्वर की देन में ढूँढ़ा गया तथा सत्ता जो तर्कसंगत-वैधानिकता पर आधारित थी, उसका आधार कानून माना गया।

1. बौद्धिक वैधानिक (rational legal) सत्ता

यह वह सत्ता है जिसमें किसी पद के कारण सत्ता का प्रयोग व प्रदर्शन होता है, जैसे मुख्यमंत्री का पद, नगरपालिका अध्यक्ष का पद, जज का पद या स्कूल प्राचार्य का पद आदि अर्थात् निर्वाचित एवं नियुक्त सरकारी अधिकारी या किसी भी औपचारिक संगठन के पदाधिकारी इस प्रकार की सत्ता के उदाहरण हैं। हम कह सकते हैं कि इस प्रकार की सत्ता का पालन किसी पद पर नियुक्ति के कारण होता है जो उस वैधानिक व्यवस्था या उस पद के साथ जुड़ी होती है। उदाहरण के लिए स्कूल में प्रधानाचार्य का पद। इस पद के परिणामस्वरूप जिस व्यक्ति

2. परम्परागत (traditional) सत्ता

इस प्रकार की सत्ता की वैधता का आधार प्राचीन काल से ही चली आ रही व्यवस्था व परम्परा को माना जाता है। इसमें किसी व्यक्ति अथवा समूह को केवल इसी कारण उच्च तथा सबल माना जाता है क्योंकि परम्परा ही ऐसी रही है। एक राजतंत्र

में राजा की सत्ता का आधार जन्म है, वह राजा इसलिए है कि उनका पिता भी राजा था। भारतीय समाज में ब्राह्मणों की सत्ता को भी इसी श्रेणी का उदाहरण माना गया है। ऐसी सत्ता में लोगों के विश्वास का आधार श्रद्धा होती है। व्यक्ति आदेशों का पालन इसलिए करता है क्योंकि वह उन प्रयासों के प्रति श्रद्धा रखता है, जो आदेशकर्ता को आदेश देने योग्य स्थिति में रखे हुए है। उदाहरण के लिए भारतीय समाज में पति-पत्नी के बीच सत्ता का आधार परम्पराएँ हैं। पैतृकता, आयु की वरिष्ठता, पितृसत्तात्मकता आदि भी इस प्रकार की सत्ता के अन्य उदाहरण हैं। परम्परागत सत्ता को सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता। इसका कारण यह है कि परम्पराएँ मानव समाज की विरासत हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती हैं और इनमें कुछ बदलाव भी होते रहते हैं। यद्यपि इस प्रकार की सत्ता का वर्तमान महत्व कम हुआ है फिर भी ऐसी सत्ता ने अभी भी समाज में अपनी जड़ें जमाई हुई हैं।

3. चमत्कारी (charismatic) सत्ता

चमत्कारी सत्ता न तो परम्परागत है और न ही कानूनी तार्किक आधारों पर निर्भर है। यह पहले बताए गए दोनों आधारों से बिलकुल भिन्न है। चमत्कार, किसी व्यक्ति में कुछ गुणों का नाम है जो उसको ईश्वरीय कृपा अथवा क्षमता प्रदान करते हैं जिससे वह दूसरों को प्रेरित करने और उनमें जोश भरने का काम कर सकता है। ये ऐसे विशिष्ट गुण हैं जो लोगों में कम ही दिखाई देते हैं। जिनके पास यह गुण होता है, वे लोगों का समर्थन बिना किसी कठिनाई के सहज ही जुटा लेते हैं। वे अपने व्यक्तित्व में निहित उन दुर्लभ गुणों के आधार पर तथा समाज की समस्याओं को सुलझाने की अद्वितीय प्रवृत्ति के कारण लोगों का नेतृत्व करने के योग्य होते हैं। इस दृष्टि से प्रत्येक चमत्कारी नेता का न केवल अद्वितीय व्यक्तित्व होता है अपितु उसकी समाज की समस्याओं को हल करने की प्रवृत्ति भी पहले की प्रवृत्तियों से भिन्न दिखाई देती है। यदि हम किसी चमत्कारी नेता और उसके अनुयायियों में सम्बन्धों का

विश्लेषण करने लगें तो हमें ज्ञात होता है कि इस प्रकार का सम्बन्ध भी अन्य सम्बन्धों से बिलकुल अलग है। अनुयायी चमत्कारी नेता में विश्वास रखते हैं और प्रायः सही-गलत में भेद करने का प्रयास नहीं करते। चमत्कारी नेता वास्तव में दूसरों को प्रेरित करने में सक्षम होता है। इसके फलस्वरूप अनुयायी उसमें आस्था विकसित कर लेते हैं यानी चमत्कारी नेतृत्व एक विश्वास को लेकर चलता है जो नेता और अनुयायियों के बीच सम्बन्धों को यथावत बनाए रखता है।

भारतीय सन्दर्भ में भूदान/ग्रामदान आन्दोलन में विनोबा भावे, स्वतंत्रता आन्दोलन में महात्मा गांधी तथा लोकपाल के लिए अन्ना हज़ारे की भूमिका को चमत्कारी नेतृत्व के रूप में देखा जा सकता है।

सत्ता के स्रोत

सत्ता के स्रोतों की जब हम बात करते हैं तो दो तरह के सत्ता स्रोत नज़र आते हैं। एक वो जो प्रकृति प्रदत्त होते हैं तथा दूसरे वो जिन्हें अर्जित किया जाता है। प्रकृति प्रदत्त एक ऐसे स्तर की सत्ता है जो हर प्राणी के पास होती है। लेकिन जब हम अर्जित सत्ता की बात करते हैं तो यह सबको नसीब नहीं होती। इसे समझने के लिए हमें जैव-विकास को थोड़ा देखने-समझने की ज़रूरत है। उसे समझकर अर्जित सत्ता के स्रोत को समझना शायद आसान हो जाए।

जैव-विकास की लम्बी यात्रा के बाद मानव ने अपनी विशेष शारीरिक बनावट एवं स्व-चेतना के कारण बाकी प्राणियों से अलग विशिष्ट क्षमता अर्जित कर ली जिसमें उसके हाथ की अंगुलियों की बनावट तथा दो पैरों पर खड़ा होकर चलना विशेष रुप से महत्वपूर्ण रहा। इससे उसका विज़न यानी दूर तक देख पाना अन्य प्राणियों से कई गुना अधिक हो गया तथा हाथ की विशेष बनावट के कारण उसकी पकड़ बहुत मज़बूत हो गई, शायद इस सबकी वजह से वह प्रकृति के अन्य जीवों को अपने अधीन करने में कामयाब रहा। इसके बाद उसने प्राकृतिक संसाधनों को अपने नियंत्रण में लेना शुरू किया और शायद यही वह समय था जब एक मनुष्य ने दूसरे मनुष्य को अपनी सत्ता से प्रभावित करना आरम्भ किया। लेकिन यह सत्ता आखिर आती कहाँ से है? इसके प्रमुख स्रोत कौन-कौन-से होते हैं? अब इन्हें समझने की ज़रूरत महसूस हो रही है। आइए, इसे कुछ उदाहरणों से समझने का प्रयास करें।

1. आर्थिक

आर्थिक सत्ता से जुड़े कई उदाहरण हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं। यहाँ हम एक उदाहरण के माध्यम से इस सत्ता को समझने का प्रयास करेंगे - गाँव में एक बहुत बड़ा किसान है। वह अपनी ज़मीन को हर वर्ष बटाई पर देता है। लेकिन किसान ही तय करता है कि उसके अमुक खेत में

सत्ता के स्रोत

धान, सरसों व गेहूँ बोया जाएगा। यानी खेत में क्या फसल बोई जानी है उसमें बटाईदार का हिस्सा क्या होगा, यह सब तय किसान की मर्ज़ी से होता है। क्या किसी बटाईदार को आपने इसके उलट निर्णय लेते हुए देखा है कि वह तय करे कि उसका हिस्सा क्या होगा, वह कौन-सी फसल पैदा करेगा, कब और कहाँ बेचेगा? शायद नहीं। इसका अर्थ यह हुआ कि यहाँ पर सत्ता किसान के पास है जो उसे उसकी आर्थिक स्थिति के कारण प्राप्त हुई। लेकिन जब वही किसान अपनी फसल को अनाज मण्डी में बेचने जाता है तो वह यह तय नहीं कर पाता कि उसकी फसल के दाम क्या होंगे। बल्कि मण्डी में मौजूद आढ़तियों का समूह तय करता है कि उसकी फसल का मूल्य क्या होगा। इस उदाहरण में जिस व्यक्ति की आर्थिक स्थिति अधिक मज़बूत है वह अपने से कमज़ोर आर्थिक स्थिति वाले लोगों पर नियंत्रण करता हुआ दिखाई देता है। इसका अर्थ हुआ कि सत्ता का एक स्रोत आर्थिक संसाधनों पर नियंत्रण से प्राप्त होता है। अर्थात् सत्ता का यह स्रोत संसाधनों पर नियंत्रण व उससे प्राप्त होने वाली सत्ता को रेखांकित करता है। आर्थिक सत्ता यह तय करती है कि क्या और कितना पैदा किया जाए, उसकी कीमत क्या हो, उसे पैदा करने में कितने लोगों को रोज़गार मिले, उनका पारिश्रमिक क्या हो, सेवा/उत्पाद का मूल्य क्या हो, कितना लाभ कमाया जाए और लाभ का बँटवारा कैसे हो।

2. ज्ञान

जिस तरह से अर्थ पाने के लिए बुनियादी आर्थिक संसाधनों की ज़रूरत

होती है, ठीक उसी तरह ज्ञान पाने के लिए बुनियादी शैक्षिक ढाँचे की ज़रूरत हमेशा से रही है। जिन भौगोलिक क्षेत्रों में इस तरह के बुनियादी शैक्षिक ढाँचे बन पाए, उन क्षेत्रों के लोग ज्ञान हासिल करने में आगे रहे। भारत के सन्दर्भ में जब इस पर विचार करते हैं तो पता चलता है कि हमारे यहाँ बुनियादी शैक्षिक ढाँचे बने तो ज़रूर मगर वो सबके लिए उपलब्ध नहीं थे। इसलिए लम्बे समय तक एक खास वर्ग के लोग (ब्राह्मण) ही उसका लाभ लेते रहे और अपने ज्ञान/तर्क के आधार पर अन्य वर्गों को प्रभावित व नियंत्रित करते रहे। इस वर्ग के पास आर्थिक संसाधन सीमित होने पर भी इन्होंने अपने ज्ञान/तर्क के आधार पर नई-नई विचारधाराओं को जन्म दिया तथा उन्हें वैधता प्रदान कराने में सफलता पाई और अपने ज्ञान की सत्ता स्थापित की। इतिहास में ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब ब्राह्मण वर्ग ने राजा-महाराजाओं को भी अपने ज्ञान की सत्ता से प्रभावित व नियंत्रित किया। चाणक्य का उदाहरण उनमें से एक है।

वर्तमान परिदृश्य में जब पूरी दुनिया में ज्ञान का विस्फोट हो रहा है और वैश्वीकरण के कारण नई अवधारणाएँ जन्म ले रही हैं, तब यह सत्ता स्रोत और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। लेकिन ज्ञान की सत्ता तक पहुँच बनाने के लिए सिर्फ शैक्षिक ढाँचे ही ज़िम्मेदार नहीं हैं बल्कि व्यक्ति से जुड़े अन्य पहलू भी उसे प्रभावित करते हैं।

3. राजनीतिक संस्थान/संगठन

संस्थाओं में सत्ता निहित होती है और जिसे इन संस्थाओं का समर्थन प्राप्त हो, सही मायने में वे सत्तासीन होते हैं। ऐसा कोई व्यक्ति जो किसी सत्ता से सम्बद्ध न हो, और मीडिया से दूर हो तो वह कमज़ोर व सत्ताहीन होगा। सभी तरह की सत्ता संस्थाओं द्वारा नहीं मिलती लेकिन संस्था में पद सत्ता का ज़रूरी व सतत आधार होता है। किसी बड़ी संस्था से सम्बद्ध होने के कारण व्यक्ति मूल्यवान अनुभवों को सँजोए रखता है जिससे वह सत्ता को प्राप्त करता है। उदाहरण स्वरूप एक सामान्य-सा राजनेता अपने दल की सत्ता के आधार पर कई सारे कानूनों के क्रियान्वयन को शिथिलता प्रदान करने में कामयाब हो जाता है। हम देखते हैं कि कई बार राजनेता ऐसे कानूनों में फेर-बदल/संशोधन करवा देते हैं जो उनके सामने रोड़ा बने हुए होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि कानून से भी सत्ता प्राप्त होती है। लेकिन प्रश्न उठता है कि ये कानून बनाते कौन हैं अर्थात् कानून बनाने की सत्ता किसके पास निहित है। जब इसकी तह में जाने का प्रयास करते हैं तो स्थिति साफ हो जाती है कि असली सत्ता राजनीतिक संस्थानों/संगठनों से आती है। यानी सत्ता का तीसरा केन्द्र राजनीति हुई।

इस तरह यदि मोटे रूप में देखें तो हमें सत्ता के तीन प्रमुख केन्द्र नज़र आते हैं।

1. अर्थ

2. ज्ञान

3. राजनीतिक संस्थान/संगठन

सत्ता को प्रभावित करने वाले कारक

सत्ता के स्रोतों में ही सत्ता को प्रभावित करने वाले कारक निहित होते हैं। मसलन, जब हम राजनीतिक सत्ता की बात करते हैं तो हम जानते हैं कि संख्या बल के बिना आजकल की राजनीति असम्भव नज़र आती है। राजनीति का स्वरूप चाहे लोकतांत्रिक हो या अन्य कोई, संख्या बल को नकारा नहीं जा सकता। हाँ, लोकतंत्र में संख्या बल का महत्व और अधिक हो जाता है। लोकतंत्र में सबसे पहले तो यदि किसी राजनीतिक दल से चुनाव लड़ना है तो दल का टिकिट हासिल करने और फिर चुनाव जीतने के लिए पर्याप्त बहुमत होना अनिवार्य शर्त है। कई बार आप किसी सरकार की केबिनेट में जगह बना पाते हैं कि नहीं, यह भी इस पर निर्भर करता है कि आप कितने पार्टी प्रतिनिधियों को प्रभावित करने की क्षमता रखते हैं। आपके साथ कितना संख्या-बल है, यह आपकी 'साम दाम दण्ड' की नीति से तय होता है। इसके लिए ज्ञान ही ज़रूरी नहीं बल्कि धन-बल/बाहुबल की भी ज़रूरत पड़ती है।

पिछले 25-30 वर्षों में भारत की राजनीति में कुछ बड़े परिवर्तन देखने को मिले हैं। खास तौर से क्षेत्रिय दलों का उदय एवं फैलाव। ये क्षेत्रिय दल उभरने के पीछे दो-तीन बड़े कारण समझ में आते हैं। मसलन, केन्द्रिय सत्ता द्वारा प्रादेशिक सत्ता को लगातार नज़रअन्दाज करना, कुछ वर्ग/जातियों की राजनीतिक जागृति एवं राजनीति में उनका उपहास, क्षेत्रिय मुद्दों को केन्द्र सरकार द्वारा लगातार उपेक्षित भाव से देखना, खासकर भाषा विवाद, जल विवाद, बढ़ती बेरोज़गारी आदि। ऐसे में पिछड़े वर्गों की नुमाइंदगी करके कुछ दलित एवं पिछड़े वर्ग के लोगों की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं के चलते जातिगत राजनीति उभरी और इसमें संख्या-बल की भूमिका का उपयोग करके कुछ लोगों की राजनीति तक पहुँच ज़रूर बनी है लेकिन इसे पर्याप्त नहीं कहा जा सकता।

जब हम आर्थिक सत्ता की बात करते हैं तो समझ में आता है कि उत्पादन के साधनों पर कब्ज़ा/स्वामित्व कितना है। जिसके पास जितने अधिक उत्पादन के साधन होंगे, वह उतना ही बड़ा पूंजीपति होगा/होगी। अब सवाल उठता है कि उत्पादन के साधनों तक पहुँच के लिए क्या-क्या ज़रूरी है। जब इसकी पड़ताल करने निकलते हैं तो कई सारी बातें सामने आती हैं, जैसे - किसी का जन्म किस परिवार/जाति/वर्ग/धर्म में हुआ है। उदाहरण के लिए आप किसी राजनेता/उद्योगपति/अधिकारी के घर जन्मे हैं या किसी दलित, आदिवासी, दिहाड़ी मज़दूर या खेतीहर किसान के घर - - इससे तय हो जाता है कि आपकी

उत्पादन के साधनों तक पहुँच कैसी होगी। इसमें व्यक्ति-विशेष की भूमिका नगण्य होती है। लेकिन यदि आपको सांस्कृतिक पूंजी विरासत में मिली है तो हो सकता है कि आप अपनी मेहनत से ज्ञान हासिल करके आर्थिक पूंजी कमा लें और उत्पादन के साधनों तक अपनी पहुँच बनाने में कामयाब हो जाएँ। चूँकि सांस्कृतिक पूंजी से ज्ञान तथा ज्ञान से सांस्कृतिक पूंजी परस्पर बढ़ते हैं, इसी तरह आर्थिक पूंजी ज्ञान निर्माण के अवसर बढ़ाती है तथा ज्ञान आर्थिक पूंजी बढ़ाने में मदद करता है। जेण्डर भी उत्पादन के साधनों तक पहुँच को प्रभावित करता है क्योंकि इसके कारण बहुत-से लोगों के अवसर सीमित हो जाते हैं।

ज्ञान की सत्ता को प्रभावित करने में सबसे अहम बात है कि व्यक्ति किस जाति/वर्ग/धर्म का प्रतिनिधित्व करता है। भारतीय सन्दर्भ में तो यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि यहाँ तो ऐतिहासिक दृष्टि से देखने पर समझ में आता है कि एक लम्बे समय तक कुछ जातियों/वर्गों को शिक्षा से पूरी तरह ही वंचित रखा गया है। ऐसे में उन जातियों/वर्गों के लोगों के पास सांस्कृतिक पूंजी नाम की चीज़ है ही नहीं। कई परिवारों में तो आज़ादी के 68 साल बाद भी शिक्षा तक पहुँच नहीं बनी है या फिर शिक्षा में उनकी पहली पीढ़ी का आगमन हुआ है। ऐसे में ज्ञान की सत्ता तक पहुँच बनाने में उनकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्थिति प्रभावित किए बिना नहीं रह सकती। क्या आज भी सबके पास ज्ञान निर्माण के अवसर बराबर हैं? इसको समझने में और मदद मिलती

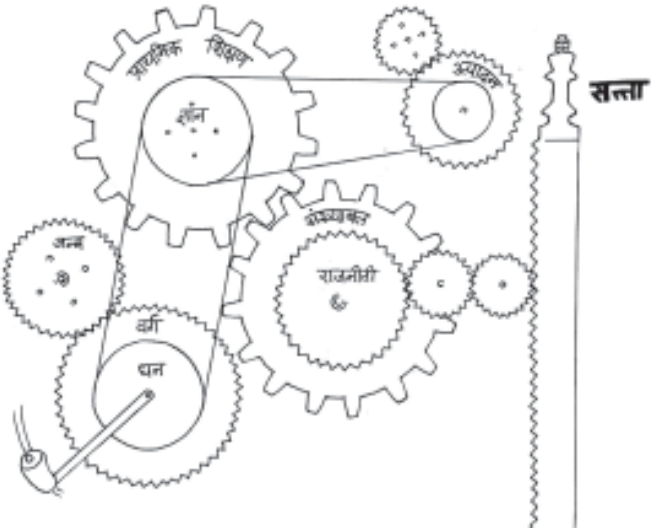

है जब हम भारत में प्रचलित प्रायमरी औपचारिक शिक्षा संस्थानों को देखने का प्रयास करते हैं। मसलन, हम देख सकते हैं कि पूरे भारत में किस-किस तरह के स्कूल सरकार संचालित कर रही है। एक तरफ केन्द्रिय विद्यालय, नवोदय विद्यालय, सैनिक स्कूल, मॉडल स्कूल, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी) जहाँ पर पर्याप्त संसाधन मौजूद हैं तो दूसरी तरफ राजकीय प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक स्कूल, शिक्षाकर्मी स्कूल, चल विद्यालय, चरवाहा स्कूल, रात्रि पाठशाला, अनौपचारिक केन्द्र आदि जहाँ न तो शिक्षक हैं, न ही अन्य संसाधन। क्या ऐसे ही होगा कुछ लोगों का ज्ञान निर्माण?

क्या समाज में सभी के लिए ज्ञान/अर्थ/राजनीतिक सत्ता हासिल करने के अवसर मौजूद हैं? जब हम अवसर की बात करते हैं तो इसमें चार तरह की बात शामिल मानते हैं। पहली बात, व्यक्ति के पास विकल्प हों। दूसरी कि उस व्यक्ति के पास उन विकल्पों को चुनने की योग्यता हो। तीसरी, उन विकल्पों को चुनने में जो संसाधन चाहिए वो उसके पास हों। चौथी और अन्तिम बात हमारी दृष्टि में है समाज की स्वीकार्यता। यानी व्यक्ति जो कुछ करना चाहता है उसकी आज़ादी उसके पास होनी चाहिए। यदि इन चार में से किसी एक का भी अभाव है तो इसका अर्थ यह हुआ कि उसके पास पर्याप्त अवसरों का अभाव है।

हमने ऊपर विकल्प चुनने में संसाधनों का ज़िक्र किया है। एक उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं कि संसाधनों में क्या-क्या शामिल होता है। एक मज़दूर की बेटी यदि पढ़-लिखकर एक अच्छी वकील/डॉक्टर/प्रशासनिक अधिकारी बनना चाहती है तो सबसे पहले उसे यह पता होना चाहिए कि उसे क्या और कहाँ पढ़ना होगा। फिर उसको वहाँ आने-जाने व रहने के लिए पैसों की ज़रूरत होगी। चूँकि वह एक लड़की है इसलिए उसे बाहर जाकर पढ़ने की स्वीकार्यता भी चाहिए होगी। जहाँ वह पढ़ने के लिए जाना चाहती है और वहाँ पर रहने के लिए जगह स्वयं तलाशनी है तो उसका धर्म/वर्ग/जाति उसे प्रभावित किए बिना नहीं रह सकता। यदि उसकी जगह कोई ऐसा लड़का होता जिसकी कई पीढ़ी पढ़ी-लिखी हैं, वो उच्च जाति तथा शहरी मध्यमवर्गीय परिवार से सम्बन्धित हो तो उसे भी क्या वही परेशानियाँ होंगी जो उस मज़दूर की बेटी के सामने आने की सम्भावना है? इस पर चर्चा करते हैं तो समझ में आता है कि एक व्यक्ति के ज्ञान-निर्माण में उसके पास उपलब्ध सांस्कृतिक पूंजी, आर्थिक पूंजी, जेण्डर तथा धर्म/वर्ग/जाति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

कई बार एक जगह पर जो व्यक्ति सत्ताविहीन होता है वह अपनी खास जगह पर जाते ही सत्तासीन होता दिखाई देता/देती है। उदाहरण के लिए

हम एक महिला शिक्षिका को ले सकते हैं। जब वह घर में होती है तो अक्सर जेण्डर आधारित भूमिकाओं में ही दिखाई देती है, लेकिन जैसे ही वह अपने स्कूल में जाती है तो वह अपनी कक्षा के बच्चों को अपनी तरह से चलाना शुरू कर देती है। यानी जैसे ही उसकी भूमिका बदली, वैसे ही वह सत्तासीन या सत्ताविहीन होती नज़र आने लगती है। इसका अर्थ हुआ कि आपकी जगह, आपका कार्य भी आपकी भूमिका तय करता है, और इससे आपकी सत्ता प्रभावित हो जाती है। यहाँ पर एक और खास बात समझ में आती है कि सत्ताविहीन व्यक्ति को जब सत्ता मिल जाती है तो कमोबेश वह भी उसे उसी तरह इस्तेमाल करता/करती है जिस तरह के इस्तेमाल को वह अपने लिए उचित नहीं मानता/मानती है। समाज में बहुत बार देखने को मिलता है कि एक मज़दूर जब अपनी मज़दूरी के लिए किसी के यहाँ जाता है तो वह वहाँ पर वही करता है जो उससे करने को कहा जाता है। आम तौर पर वहाँ उसकी एक नहीं चलती, लेकिन जैसे ही वह अपने घर आता है तो घर में सारे महत्वपूर्ण निर्णय उसी के द्वारा लिए जाते हैं।

आइए, इस सत्ता के ढाँचे को एक रेखाचित्र से समझने का प्रयास करते हैं (चित्र-1)। चूँकि ज्ञान सत्ता का एक केन्द्र है और ज्ञान को पूँजी, जेण्डर तथा धर्म/वर्ग/जाति प्रभावित करते हैं तथा ज्ञान इन सबको प्रभावित करता है, इसका अर्थ हुआ कि यदि आपको सत्ता के ढाँचे में जगह बनानी है तो आपको किसी-न-किसी सत्ता के केन्द्र में प्रवेश करना होगा।

सत्ता पर उपर्युक्त विमर्श के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि एक स्तर की प्रकृति-प्रदत्त सत्ता सबके पास

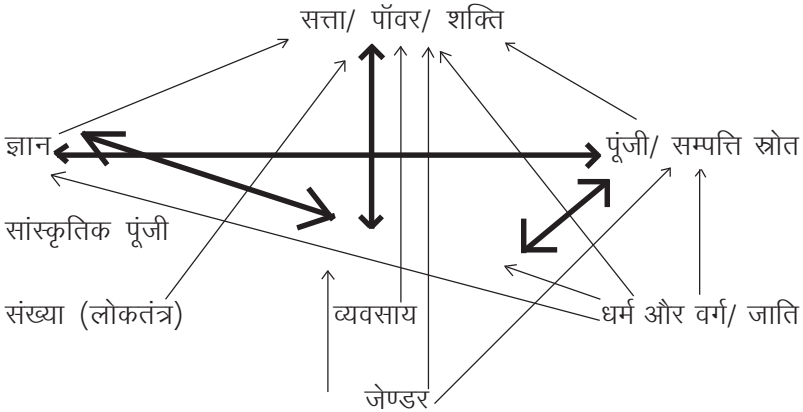

चित्र-1

होती है एवं सब लोग उसका उपयोग भी करते हैं। लेकिन सत्ता का दूसरा स्तर सबके लिए उपलब्ध नहीं है। यह स्तर पाना उत्पादन के साधनों के उचित बँटवारे के बिना सम्भव नहीं है क्योंकि सभी तरह की सत्ताओं की चाबी उत्पादन के साधन हैं। इन उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण के लिए ही हर जगह सत्ता संघर्ष दिखाई पड़ता है। चाहे हम ज्ञान की सत्ता की बात करें या फिर राजनीतिक सत्ता की और चाहे आर्थिक सत्ता की, सबको हमारे उत्पादन के साधन प्रभावित करते हैं। इसका मतलब हुआ कि सत्ता का असली स्रोत उत्पादन के साधनों में छिपा है।

सत्ता के सन्दर्भ में उपरोक्त बिन्दुओं पर विमर्श करने के बाद हम यह पाते हैं कि सत्ता केन्द्रीकृत रूप से कुछ विशेष व्यक्तियों, पदों व संस्थाओं में विद्यमान होती है जिसके द्वारा व्यक्ति और व्यक्तियों के समूह को नियंत्रित, निर्देशित व संचालित किया जाता है। सत्ता की प्रकृति में ही एकाधिकार शामिल होता है जो अन्य लोगों को सत्ता को मानने हेतु बाध्य करता है।

हालाँकि, वर्तमान परिदृश्य में जहाँ सभी मनुष्यों को समान अधिकार देने की मान्यता को स्वीकार किया जाने लगा है (जिससे सत्ता के एकाधिकार को चुनौती दी जाने लगी है), अब सभी सत्ता के केन्द्रों (पद व संस्थाओं) में उसके सभी भागीदारों को समान भागीदारी के अवसर उपलब्ध कराने की पहल की जाने लगी है।

इस तरह सत्ता के आधार समय-समय पर अलग-अलग माने जाते रहे हैं। सत्ता के आधार बदलने के साथ नए समूह व व्यक्ति नियंत्रण प्राप्त कर लेते हैं। इस तरह सत्ता सम्बन्ध निरन्तर विकसित होते और बदलते रहते हैं।

मेहमूद खान: वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, जयपुर में सामाजिक विज्ञान विषय के रिसोर्स पर्सन के रूप में कार्य कर रहे हैं। इससे पहले किशोर उम्र के लड़के एवं लड़कियों की शिक्षा एवं विकास की परियोजना में निदेशक के रूप में राजस्थान के मेवात क्षेत्र में लगभग चार वर्ष काम किया। 11 वर्ष तक संधान (शिक्षा एवं विकास अध्ययन संगठन) जयपुर में लोक जुम्बिश परियोजना तथा शिक्षाकर्मी परियोजना में शिक्षक प्रशिक्षक के रूप में कार्य करने का अनुभव भी रहा है।

सभी चित्र: निशित मेहता: *महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी ऑफ़ वडोदरा* से विज़ुअल आर्ट्स में स्नातक। चित्रकार, लेखक और कला शिक्षक के रूप में काम किया है। वर्तमान में *महाराजा सयाजीराव यूनिवर्सिटी* से कला का इतिहास विषय में स्नातकोत्तर कर रहे हैं।

सन्दर्भ:

- महान समाज शास्त्रीय विचारक - डॉ. डी.एस. बघेल
- राजनीतिक समाजशास्त्र - डॉ. धर्मवीर
- एम.ए. समाजशास्त्र प्रथम वर्ष - इग्नू
- एन.सी.ई.आर.टी कक्षा-11 - समाज का बोध
- Power and Society: An Introduction to Social Science - Brigid C. Harrison